श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष 2 अंक 9 सितम्बर 2018 पृष्ठ 28

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

आध्यात्मिक उन्नति के आठ सूत्र

१. नियमित ध्यान
२. नियमित स्वाध्याय
३. सात्विक अल्पाहार
४. प्रबल पुरुषार्थ
५. परब्रह्म के प्रति समर्पण एवं गुरुजनों के कथनों के प्रति श्रद्धा
६. शिष्टाचार
७. दृढ़ संकल्प
८. अटूट आत्मविश्वास

स्वत्वाधिकारी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

Email : shriprannathgyanpeeth@ gmail.com Youtube: SPJIN Website: www. spjin.org

Twitter : @Raajan Swami Whats App: +917533876060

अनुक्रमणिका

०१.	सम्पादकीय	कृष्ण कुमार कालड़ा	०१
०२.	निजानन्द—दर्शन पुर्ण.....	राजबाला	०७
०३.	श्री मुखवाणी....	प्रीति खतौली	१३
०४.	''ध्यान''	बबली (नलिनी)	१६
०५.	अनुचित इच्छा ही दुःख....	कुमार जी	२३

ज्ञानपीठ सुविचार

संसार विजयी व्यक्ति का स्वागत करता है, लोग उसी मनुष्य को पंसद करते हैं जिसके चेहरे पर उत्साह, उल्लास और वीरता झलक रही हो, जिसके आने पर उत्साह की लहर सी दौड़ जाये, उसे लोग सर आंखो पर बिठाते हैं।

''प्रणाम जी''

सदस्यता शुल्क

सदस्यता शुल्क

भारत में	विदेश में
वार्षिक 110 रू.	.....
आजीवन 1000 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है।

किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला—सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड—247232
सम्पर्क सूत्र—8650851010

Youtube:SPJIN
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.com

सम्पादकीय

पू. राजन स्वामी जी द्वारा की गई चर्चा का प्रलेख

परमात्मा कहाँ है?

'' बिंद में सिंध समाया रे साधो, बिंद में सिंध समाया।'' 'बिंद' अर्थात् जिसकी न तो लम्बाई हो, न चौड़ाई और ही मोटाई। वैसे तो प्रत्येक सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु की कोई न कोई लम्बाई, चौड़ाई व मोटाई होती है। लेकिन सामान्य रूप से यह माना जाता है कि जो इतना सूक्ष्म हो कि जिसकी लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई को न मापा जा सके, उसे 'बिंद' या 'बिंदु' कहते हैं। यह जो हम संसार देख रहे हैं, करोड़ों galaxies वाला, एक-एक galaxy में करोड़ों सूर्य हैं, एक-एक नक्षत्र में अनेक ग्रह घूम रहे हैं, एक-एक ग्रह पर करोड़ों-अरबों प्राणी निवास करते हैं- यह समस्त सृष्टि जिसकी आज तक कोई माप नहीं कर पाया, बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने भी जिसे अनन्त कह कर वर्णित किया... इसको ही एक बिंदु माना गया है।

परमात्मा कौन है?- एक अनन्त सागर के समान अर्थात् जिसका ज्ञान, सत्ता, शक्ति व स्वरूप अनन्त है, और जो अपनी सत्ता के द्वारा इस सृष्टि में दृष्टिगोचर हो रहा है। यहाँ दो अवधारणायें हैं- प्रथम, इस जगत में ब्रह्म की सत्ता दृष्टिगोचर हो रही है जो ब्रह्म के स्वरूप का आभास कराती है। एक अन्य विचारधारा यह भी है कि सारे जगत के कण-कण में ब्रह्म विद्यमान है जो परमात्मा के स्वरूप और सत्ता को एक साथ वर्णित करती है। अब प्रश्न यह उठता है कि यदि सम्पूर्ण जगत के कण-कण में ब्रह्म व्यापक है तो सारा जगत ब्रह्मरूप क्यों नहीं दिखता। इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है। आकाश में जब सूर्य की किरणें पृथ्वी पर पड़ती हैं तो उससे पृथ्वी का एक-एक कण प्रकाशित होता है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि पृथ्वी, सूर्य में या सूर्य, पृथ्वी में ओतप्रोत हो जाता है। यदि ऐसा हो जाय तो..यह जगत भी सूर्य के समान हो जायेगा। परन्तु ऐसा नहीं है। पृथ्वी से १४ करोड़ ६८ लाख कि.मी. दूर सूर्य चमक रहा है और पूरी पृथ्वी को प्रकाशित कर रहा है। इसी प्रकार हमें यह भी मानना होगा कि यह सम्पूर्ण जड़ जगत स्वप्नमयी है और इससे परे वो चेतन, अनादि ब्रह्म है... जिसे वेदों में दिन के समान उजाले वाला कहा गया है। उसमें शाश्वत प्रकाश शांति, आनन्द और प्रेम है। यह जगत असत्य, जड़ दुखमयी व अंधकारमय है यह मोहमयी है-मोह अर्थात् अज्ञानता जिसमें कोई अपने स्वरूप को नहीं जानता। ऐसे जगत के कण- कण में सच्चिदानंद परब्रह्म के स्वरूप को कैसे व्यापक माना जा सकता है?हाँ, इसका एक कण भी परमात्मा की सत्ता से रहित नहीं है। एक छोटे से अणु में परमाणु होता है अथवा यदि इसे विज्ञान की भाषा में व्यक्त किया जाय तो कहा जा सकता है। कि एक molecule में एक atom होता है, उसमें electron, pruton, nutron होते हैं. आप सोचिये, एक atom प्रकाश के वेग से भाग रहा है, उसके कण कितनी तेजी से कम्पन कर रहे हैं- १. ८६ लाख मील प्रति सैकण्ड की गति से... फिर भी सारे पदार्थ स्थिर दिखाई दे रहे हैं... आखिर यह

गति देने वाला कौन है और यही गति ही सृष्टि का कारण है। जिस क्षण यह गति बंद हो जायेगी, उसी क्षण प्रलय हो जायेगी। परन्तु जो गति दे रहा है वह स्वयं गतिशील नहीं है। यह सारा संसार स्वप्नवत है और यह गति ही परिवर्तन शीलता का कारण है। हर पदार्थ का रूप पल-पल बदल रहा है... परन्तु ब्रह्म का स्वरूप अखण्ड है, एक रस है, चैतन्य है, उसमें परिवर्तनशीलता नहीं है तथा उसमें विकृति नहीं है। सृष्टि में चाहे सूर्य, चन्द्रमा या नक्षत्र हों, हर पदार्थ सृजन और विनाश से जुड़ा हुआ है। नये नक्षत्र, नयी galaxy का निर्माण होता है एवं galaxy ,महा galaxy में विलीन हो जाती है। इसी प्रकार, एक Black hole तारे में न जाने कितने तारे समा जाते हैं, सारे नक्षत्र व ग्रह एक सूर्य में समा जाते हैं और वह सूर्य किसी Black hole तारे में समा जाता है।

इसी प्रकार एक बालक होता है, पहले युवा होता है, फिर वृद्ध होता है और अंत में इस शरीर को छोड़ देता है। फिर न जाने उसका जीव किस योनि में प्रवेश कर जाता है। पंचभूतों का बना यह शरीर अंत में पंचभूतों में विलीन हो जाता है। इसी प्रकार पानी में बुलबुला बनता है और थोड़े समय पश्चात् अपने अस्तित्व को समाप्त कर देता है। अतः यह कहा जा सकता है कि इस नश्वर जगत में परिवर्तन शीलता है लेकिन ब्रह्म के स्वरूप में परिवर्तन शीलता की कल्पना नहीं की जा सकती।

जब हम सृष्टि की विचित्रता को देखते हैं तो एक स्वर से मानना पड़ता है कि इस नश्वर जगत में निश्चित रूप से परमात्मा का अस्तित्व है और उसके बिना एक पल भी इस सृष्टि का अस्तित्व नहीं रह सकता। श्री प्राणनाथ जी की वाणी इस तथ्य को डिंडिम घोष के साथ कहती है-'कोई कहे एक कछुए नाहिं, तो ए भी क्यों बनी आवे, जो यामें ब्रह्मसत्ता न होती, तो ब्रह्माण्ड न अधिक रहने पावे।" यदि ब्रह्म की सत्ता इस जगत में न होती तो आधे क्षण के लिये भी इसका अस्तित्व नहीं रह पाता। लेकिन ब्रह्म की सत्ता का होना अलग है और साक्षात अनन्त सूर्यों से भी अधिक प्रकाशवान उस ब्रह्म का इस नश्वर जगत के कण-कण में व्यापक होना अलग है। जैसा कि मैने पूर्व में उदाहरण दिया था कि क्या आकाश में चमकने वाला सूर्य, पृथ्वी में व्यापक होता है?यदि ऐसा हो जाय तो पृथ्वी पर प्राणियों का अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा। उसी तरह से अनन्त ज्ञान, प्रेम, सौन्दर्य, व आनन्द का धारक ब्रह्म यदि सृष्टि के कण-कण में व्यापक है तो सृष्टि में जड़ता पाप, काम-विकार एवं तृष्णा नहीं होनी चाहिये बल्कि शाश्वत प्रेम, शान्ति दिखना चाहिये। परन्तु ऐसा नहीं है।

अतः हम यह कह सकते हैं कि ब्रह्म, जगत में होते हुए भी इससे परे है। उदाहरण के लिये, लकड़ी में आग है पर दिखाई नहीं देती परन्तु उसे रगड़ने पर वह प्रकट हो जाती है। इसी प्रकार, फूल में सुगन्ध है पर दिखाई नहीं देती लेकिन उसे अनुभव किया जा सकता है। उसी तरह से दूध में मक्खन का उदाहरण भी दिया जा सकता है... परन्तु हम यह भूल कर देते हैं कि लकड़ी में जो अग्नि है वह एक पंचभौतिक तत्व ही है। सम्पूर्ण सृष्टि आकाश,वायु, जल, अग्नि और पृथ्वी द्वारा ही स्थूल रूप में दृष्टिगोचर हो रही है। लकड़ी के अन्दर सभी तत्व विद्यमान हैं। जब इसे रगड़ा जाता है तो

अग्नि तत्व प्रकट हो जाता है जो जल तत्व का उपादान कारण है। इसी प्रकार जल तत्व पृथ्वी तत्व का उपादान कारण है। कारण में कार्य निहित होता है। अतः एक लकड़ी के टुकड़े में उपादान कारण के रूप में जल, वायु, अग्नि, आकाश व पृथ्वी सभी तत्व विद्यमान हैं। लेकिन क्या वह किसान (निमित कारण) जिसने पेड़ को लगाया है, एवं जिसकी लकड़ी को रगड़ने से अग्नि प्रकट होती है, उस लकड़ी के कण-कण में विद्यमान है। इसी प्रकार, जब ब्रह्म जगत का निमित कारण है तो वह उपादान कारण अर्थात् जगत के कण-कण में कैसे हो सकता है। एक कुम्हार मिट्टी का मटका बनाता है तो क्या मटके के कण-कण में कुम्हार विद्यमान रहेगा।...यही स्थिती इस जगत की है जो स्वप्नवत है। इसलिये इसका अस्तित्व एक बिन्दु के समान बताया गया है। हम स्वप्न में हजारों किलोमीटर की यात्रा कर लेते हैं परन्तु नींद खुलने पर अपने आप को बिस्तर पर पाते हैं। वास्तव में यह सब मन का खेल मात्र है। इसी प्रकार, यह जगत अक्षर ब्रह्म के स्वापनिक मन का एक संकल्पिक रूप है... जिसके परिणाम स्वरूप प्रकृति में क्षोभ हुआ, जिसने मोहतत्व का रूप धारण किया, अहंकार की रचना हुई, पंचभूतों की रचना हुई तथा सत, तम तथा रज की साम्यवस्था भंग होने से जो गति आई थी तथा पर्वत, नक्षत्र, पृथ्वी, प्राणी आदि दिखाई देने लगे... और जब यह सृष्टि बनी तो, यह सब उत्पन्न करने वाला इस जगत से परे ही तो होगा। इसलिये कहा गया है कि परमात्मा प्रकृति के अंधकार से परे है, जबकि हम उसको यहाँ खोजने का प्रयास कर रहे हैं।

जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि यदि यह सारा जगत ब्रह्म से ओतप्रोत है तो क्या हम इसे ब्रह्मस्वरूप कह सकते हैं?वस्तुतः यह संसार दुखमय, असत, जड़ एवं त्रिगुणात्मक है जबकि ब्रह्म प्रेम, आनन्द और शान्ति का सागर है और सच्चिदानंदमय है। जगत को कभी किसी ने सच्चिदानंदमयी नहीं कहा। हाँ, यदि हम उसके प्रेम में डूब गये तो हमारी दृष्टि में भिन्नता आ जाती है- ऐसा प्रतीत होता है कि यह सारा प्रकृति मंडल उस ब्रह्म की सत्ता से संचालित हो रहा है और उस प्रकृति के प्रेम में डूबा हुआ हृदय यही गाता है कि हर कण में तेरी रचना समायी हुई है, हर कण में तेरी सत्ता है तथा हर कण पुकार-पुकार कर कह रहा है कि अनन्त सृष्टि को बनाने वाला सर्वशक्तिमान, सकल गुण निधान है अन्यथा वैज्ञानिक चकाचौंध, यौवन,पद-प्रतिष्ठा और धन के मोह में अंधा प्राणी तो यह मानने को भी तैयार नहीं है कि परमात्मा नाम की कोई सत्ता भी है। वह अपनी भौतिक उपलबिधयों को प्राप्त कर प्रसन्न होता है कि इससे अधिक तो कुछ हो ही नहीं सकता। प्रश्न यह है कि शून्य में क्या कोई मनुष्य धूल का एक कण भी बनाने की सामर्थ्य रखता है। उत्तर मिलेगा- नहीं। जब मनुष्य के पास इतनी भी साम्यर्थ नहीं है तो इतने अनन्त नक्षत्र एवं प्राणियों की रचना करने वाला कौन है?क्या वह परमात्मा नहीं है?भक्तिभाव तथा ज्ञान के प्रकाश में अपने हृदय को आकंठ तक डुबोया हुआ कोई मानव जब यह स्वीकार करता है कि इस सृष्टि में एक कण भी ऐसा नहीं है जो परमात्मा की महिमा से रहित हो, इसलिये अलंकारिक भाषा में यह कहा जाता है कि कण-कण में तेरा बसेरा है। किसका बसेरा- उसकी

सत्ता का लेकिन उसका अखण्ड स्वरूप कहीं ओर है, जहां प्रकृति नहीं है। ... इसलिये वेद ने कहा है कि परमात्मा पृथ्वी, अंतरिक्ष व देवलोक से परे है.. इसको जानकर भी मानव मन कहीं न कहीं भटक कर परमात्मा की सत्ता को ही उसका स्वरूप मान लेता है। यह अवश्य है कि वह सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान है, एवं सम्पूर्ण सृष्टि का कर्ता है। परन्तु हम उसको किसी मानवीय धरातल पर नहीं देख सकते कि वह कहीं एक कोने में बैठा हुआ है। सम्पूर्ण प्रकृति मंडल यदि ब्रह्म के एक पाद में माना जाय तो वेद कहता है कि इसके परे त्रिपाद अमृत हैं... और वे तीनों पाद प्रकाशमय और अखण्ड हैं। बात यहीं पर समाप्त नहीं हो जाती। इस त्रिपाद मंडल, जिसे बेहद मंडल भी कहते हैं वह उससे भी परे है जिसे अक्षरातीत कहते हैं। अक्षर की लीला का धाम बेहद मंडल और अक्षरातीत की लीला का धाम परमधाम है जबकि यह जगत तो हद है जिसे 'बिंद' कहकर दर्शाया गया है। लेकिन इस बिंद जिसे स्वप्नविक व काल्पनिक कहते हैं वास्तव में ऐसा नहीं है। यह सूर्य और चांद-सितारे जो हमें दिख रहे हैं महाप्रलय में इनका अस्तित्व समाप्त हो जायेगा परन्तु जगत को स्वप्नवत कहने का आशय यह नहीं है कि जगत है ही नहीं।... स्वप्न में ही सही, कहीं न कहीं इसका अस्तित्व तो है। अनन्त काल से यह पृथ्वी बनती रही है और लय को प्राप्त होती रही है तथा भविष्य में भी यह क्रम चलता रहेगा लेकिन इसका रूप अखण्ड नहीं है। इसके विपरीत ब्रह्म का स्वरूप अखण्ड है, उसके समकक्ष यह जगत प्रतिपल परिवर्तनशील है, इसलिये इसे स्वप्नवत कहा गया है।

सर्वशक्तिमान परमात्मा की सच्चे हृदय से की गई आराधना हमारे मन को निर्विकार कर देती है। सारा जगत ब्रह्मरूप है तो फिर काम, क्रोध, लोभ, एवं अहंकार की अग्नि इसमें क्यों जल रही है?इस बात को हम इस तथ्य से भी समझ सकते हैं- जैसे हवा के झोंके एक फूल की सुगंध को वातावरण में फैलाते तो हैं लेकिन फूल कण-कण में व्यापक नहीं होता। जैसा कि प्रारम्भ में कहा जा चुका है कि ब्रह्म, जगत का निमित कारण है और निमित कारण कभी भी उपादान कारण में व्यापक नहीं होता। जिस तरह से फूल में सुगन्ध, लकड़ी में आग तथा दूध में मक्खन का अस्तित्व होता है- यह सभी उपादान कारण है। दूध में मक्खन छिपा रहता है लेकिन दूध और मक्खन दोनों जड़ हैं। दूध को उत्पन्न करने वाली गाय निमित कारण है परन्तु वह दूध के कण-कण में व्याप्त नहीं होती।... इसी तरह से इस जगत की विचित्र रचना को देखकर हर मनीषी का मन अनायास ही बोल पड़ता है कि इस सृष्टि को बनाने वाला विलक्षण परमात्मा है जो अनन्त ज्ञान, प्रेम एवं सत्ता से युक्त है। अतः यह कोई नहीं कह सकता कि परमात्मा नहीं है।

यही अलंकारिक भाव हमें लेना होगा। लेकिन हम जब ब्रह्म के अखण्ड स्वरूप की बात करते हैं तो हमें वहां चलना होगा जहां प्रकृति का विकार नहीं है तमस से परे है। तभी तो ऋषियों ने कभी परिकल्पना की थी कि हे परमात्मा! अस्तो मा सद्गमे- हमें इस असत्य जगत से शाश्वत सत्य की तरफ ले चल जहां सत्य ही सत्य है। तमसो मा ज्योर्तिगमे अज्ञानता के अंधकार से शाश्वत प्रकाश की ओर ले चल, जहाँ अंधकार नहीं है, केवल प्रेम और आनन्द है। हे मेरी आत्मा! तू उस शाश्वत

परब्रह्म के प्रति गमन कर जिसके धाम में शाश्वत आनन्द, प्रेम और प्रकाश है। तभी तो यह कहा जाता है... हे परमात्मा! तू तेजस्वरूप है, मेरे अन्दर तेज धारण कर। मनीषियों ने उस आनन्द तेजोमयी परब्रह्म को पाने का प्रयास किया। इस अंधकारमय जगत में हम जितना भटकेंगे तो सत, रज और तम का ही प्रसार दिखाई देगा। यदि हम इससे परे नहीं जा सकते तो परमात्मा का साक्षत्कार कभी नहीं हो सकता।

अन्तोगत्वा निर्विह समाधि क्या है?इसमें हम प्रकृति के बन्धनों को पार कर अपने आत्म स्वरूप में स्थित हो जाते हैं। और यदि गति बढ़ती है तो हमारी अर्न्तदृष्टि उस सर्वशक्तिमान का परमगुहा में साक्षत्कार कर लेती है। यदि हम प्रकृति के भिन्न-भिन्न मण्डलों में प्रकृति की ज्योतियों को ही देखकर यह मान लें कि हमने ब्रह्म का साक्षत्कार कर लिया तो कहीं न कहीं हम धोखा खाये होते हैं। यदि हमने सूर्य या चन्द्रमा के जगमगाते प्रकाश को देख लिया तो यह मान लेते हैं कि हमने परमात्मा के दर्शन कर लिये हैं। वास्तव में हम अपने मन, बुद्धि, चित्त व अहंकार का ही दर्शन कर रहे होते हैं। इसलिये हर मनीषी यह चाहता है कि मैं उस परमात्मा को पा जाँऊ-कहां है वो। जब से यह सृष्टि उत्पन्न हुई है और भविष्य में भी अनन्त काल तक यह क्रम जारी रहेगा- हर चेतन प्राणी शाश्वत आनन्द को खोजने का प्रयास करेगा, परमात्मा की खोज जारी रहेगी। ''त्रिगुण स्वरूप खोजत भये विस्मय, पर अलख न जाय लखाया'' - त्रिगुण का स्वरूप किसे कहते हैं?सत, रज और तम से युक्त हर प्राणी है- सृष्टि में इससे रहित कोई नहीं है। हां, समाधि अवस्था में अवश्य चेतना इनसे रहित हो जाती है। लेकिन हमारा यह जो पंचभौतिक तन है या यह जो पंचभूतात्मक ब्रह्माण्ड है सत-रज-तम से ही निर्मित है। लेकिन पौराणिक मान्यता में त्रिगुण स्वरूप का तात्पर्य ब्रह्मा, विष्णु और शिव से लिया जाता है। इसके अनुसार ब्रह्मा में रजो गुण की प्रवृति अधिक है, विष्णु में सतो गुण की तथा शिव में तमो गुण की। लेकिन सृष्टि के प्रारंभिक काल के ये तीनों मनीषी महान योगी, एवं विद्वान रहे हैं। इन्होंने खोजना चाहा कि आनन्त सत्ता वाला वह परमात्मा कहां है- उसे कैसे खोजें-ध्यान लगाया, लम्बी-लम्बी समाधियां लगाई... लेकिन परिणाम क्या हुआ?जब तक हम प्रकृति मण्डल को पार नहीं करते, हम स्वयं को नहीं जान पायेंगे कि हम कौन हैं?परमात्मा की बात तो छोड़िये। प्रकृति से परे जो उस सच्चिदानंद परमामा का शाश्वत सौन्दर्य है- अनन्त तेज, प्रेम, शान्ति व आनन्द का जो मूल है वो परमात्मा अपने अखण्ड स्वरूप से तभी दृष्टिगोचर होगा जब हम परमगुहा में, प्रकृति से परे- एकादश द्वार में प्रवेश करेंगे। दसवें द्वार तक तो प्रकृति ही प्रकृति है। जब तक हम अपने आत्म स्वरूप में स्थित नहीं हो जाते, तथा शुद्ध हंस अवस्था में आ नहीं जाते.... उस पर ब्रह्म का साक्षात्कार नहीं हो सकता हाँ समाधियों से सिद्धियां अवश्य मिल सकती हैं, आप चमत्कार दिखा सकते हैं, और संसार आपको योगीराज कह कर

आपकी पूजा कर सकता है लेकिन आपको यह बोध नहीं होगा कि परमात्मा कहाँ है?

'त्रिगुण स्वरूप खोजत भये विस्मय, पर अलख न जाय लखाया'- उस अलख को आज दिन तक कोई जान नहीं पाया क्योंकि वो मन और वाणी से परे है... प्रकृति मण्डल में तो हमारे मन की गति है-मन से उसका मनन किया जा सकता है एवं बुद्धि से उसकी विवेचना की जा सकती है लेकिन परम गति वह है जिसमे मन व बुद्धि शांत हो जावे- हमारी अर्न्तदृष्टि प्रकृति से परे बेहद मण्डल में पहुँच जावे और यदि परब्रह्म की कृपा होती है और हमारे हृदय में प्रेम की रसधारा बहती है तो बेहद से भी परे हम परमधाम में भी छलांग लगा सकते हैं। श्री प्राणनाथ जी की ब्रह्म वाणी इन्हीं तथ्यों पर प्रकाश डालती है यदि यह नश्वर जगत ब्रह्मरूप है तो यह दुखमय क्यों है, तथा इसमें जन्म-मरण का चक्र क्यों है तृष्णा का सागर क्यों लहरा रहा है?... जहां सच्चिदानंद परब्रह्म कण-कण में है, वहाँ दुख के आर्तनाद सुने जा रहे हों, यह कभी नहीं हो सकता। लेकिन ऐसा ही है। हर प्राणी किसी न किसी रूप में दुखी है... वह दुखों से मुक्ति पाना चाहता है, तभी तो वह प्रकृति के सुखों की तरफ भागता है। हां किसी -किसी के अन्दर अवश्य विवेक आता है और उसे लगता है कि प्रकृति में शाश्वत सुख नहीं है वरन् यह तो तृष्णा है और इसके लिये हमें प्रकृति से परे चलना पड़ेगा। महर्षि कपिल ने सांख्य दर्शन में यही तथ्य दर्शाते हुए कहा है कि प्रकृति भौतिक सुखों का उपभोग हमारे सामने उपस्थित करती है और हमें इससे परे होकर अपने स्वरूप में स्थित हो जाना है, तभी हम अपने निज के स्वरूप को जान सकते हैं। योगदर्शन भी इसी तथ्य को स्पष्ट करता है कि चित्त की वृतियों का निरोध हो जावे क्योंकि ये प्रकृति तक ही जायेंगी। यदि ये वृतियां अपने मूल कारण में लय हो जावें तो हमारी चेतना अपने स्वरूप में स्थित हो जायेगी और परब्रह्म की कृपा की छत्रछाया में प्रकृति से परे जाकर हम परब्रह्म के शाश्वत सौन्दर्य का रसपान कर सकते हैं।

अन्त में, हम यही कह सकते हैं कि यह सारा संसार स्वप्नवत बिन्दु के समान है और इस जगत के कण-कण में उस अनादि, अनन्त सच्चिदानन्द परब्रह्म की सत्ता क्रीड़ा कर रही है, लेकिन उसका अखण्ड स्वरूप प्रकृति के अंधकार से परे है जिसको पाना ही मानव जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य होना चाहिये। श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी के प्रकाश में हम वेदों के उन रहस्यों को समझ सकते हैं जिससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्म की सत्ता और स्वरूप अभिन्न हैं पूर्णतया उचित नहीं है क्योंकि निमित कारण कभी भी उपादान कारण में व्यापक नहीं है हो सकता। जड़ सृष्टि में चेतन, ब्रह्म प्रकट हो जाय, यह सम्भव नहीं। हां इस जगत में रहते हुए अपनी अर्न्तदृष्टि से चेतन ब्रह्म का जड़ प्रकृति में साक्षत्कार अवश्य किया जा सकता है।

प्रणाम जी

प्रलेख-कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

निजानन्द-दर्शन पूर्ण रूप से जाहिर क्यों नहीं?

प्राणधार सुन्दरसाथ जी व धर्म वृन्द साथियों! प्रायः जन सामान्य में संशय बना रहता है कि आदि नारायण तक की जानकारी समस्त संसार को है- उसी से सम्बन्धित सभी धर्म सम्प्रदायों, पन्थ पैड़े सब संसार में बढ़-चढ़ कर फैल रहे हैं परन्तु हमारा निजानन्द सम्प्रदाय क्यों नहीं फैल पा रहा है। साथ ही साथ कृष्ण अवतार को सारी दुनिया मान रही है, हर घर-घर में बाल कृष्ण (लड्डु गोपाल) की भी पूजा (संसार) भारत वर्ष अपने-अपने विधि-विधान से कर रहा है, परन्तु हमारे श्री प्राण नाथ जी की पहचान संसार में अब तक पूर्ण रूप से क्यों नही प्रसारित (फैल पा रही) हो पाई है। श्री प्राणनाथ जी क्यों जाहिर नहीं हो पाये हैं?

सुन्दरसाथ जी किसी भी मत-पन्थ के अधिक प्रचार प्रसार का कारण यह नहीं होता कि उनका ज्ञान अत्यधिक सर्वश्रेष्ठ हो या उनका धर्म-प्रर्वतक अत्यधिक सर्वश्रेष्ठ हो। समस्त संसार में ईसाई धर्म प्रथम स्तर पर है और दूसरे नम्बर पर बोधमत है। तीसरे पर इस्लाम

ऐसा नहीं है कि ईसा-मसीह और महात्मा बुद्ध गौतम से श्रेष्ठ व्यक्तित्व वाला मानव इस संसार में जन्मा ही नहीं। इन मतों का तत्व ज्ञान भी इतना सर्व-श्रेष्ठ नहीं है सामान्य है। ईसाई धर्म में तो भौतिक वाद की प्रधानता है, वहीं बोद्ध-धर्म में नास्तिकता वाद का बोल बाला है। परन्तु प्रचार-प्रसार में प्रचारकों की अधिक संख्या, उनका सतत प्रयास, और राजनैतिकता का प्रभाव के कारण अधिक फैलाव हो गया है। इसी प्रकार इस्लाम धर्म तलवार के बल पर दुनिया के अनेक देशों में प्रसारित हो गया है। फैल चुका है।

निजानन्द में आचरण (रहनी) पर अधिक जोर दिया गया है यह कथनी की प्रक्रिया नहीं, इसमे देवी-देवता की आराधना नहीं होती और न हीं चौदह लोकों के सुखों की चाहना, इन तृष्णाओं को छोड़कर एक पूर्ण ब्रह्म अक्षरातीत पारब्रह्म को अंगना भाव से रिझाना होता है। अर्थात् प्रेम लक्ष्णा भक्ति होती है। इसलिए सामान्य लोग इसे तीव्र गति से ग्रहण नहीं कर पाते। परन्तु सामान्य रूप से यदि प्रचार किया जाये और समझाया जाये तो तीव्र गति से प्रसारित हो सकता है।

आज दिन तक दुनिया असंख्य बार बनी और लय को प्राप्त हुयी परन्तु उस अक्षरातीत पारब्रह्म के बारे में कोई भी स्पष्ट रूप से नहीं बता सका।

चौदे तबको बका का, कोई बोल्या न एक हरफ।
तो एक क्यों पावे हक सूरत, किन पाई न बका तरफ।। खि. ६/१७

इस चौदह लोक के क्षर ब्रह्माण्ड में किसी ने भी उस अखण्ड परमधाम के बारे में एक शब्द भी नहीं बोला। जब संसार को उस अनादि अखंड आनन्द परमधाम की पहचान नहीं हुयी तो भला वे पारब्रह्म के स्वरूप का क्या वर्णन कर सकते थे?

त्रैगुन सिफत कर कर गये, ऐ जो खावन्द जिमी आसमान।
खोज खोज खाली गये, माहें थके ला मकान।।
खि. ६/८

संसार के मालिक ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी सच्चिदानन्द की महिमा गाते गाते थक गये। लेकिन न तो वे निराकार से आगे जा सके और न उस अक्षरातीत के बारे में कुछ जान सके तो भला उनसे उत्पन्न होने वाले दुनिया के जीव, जो आग, पानी, पत्थर की पूजा करते हैं ऐसे अनमोल ब्रह्म-ज्ञान को इतनी शीघ्रता से कैसे ग्रहण कर सकते हैं?।

मानव की वृत्ति खोजी होती है, हर युग का मानव खोज करता रहा चाहे वह ऋषि, मुनी, ज्ञानी, महापुरूष, तपस्वी, सन्तवृति का था कि वह पारब्रह्म कैसा है?कहाँ मिलेगा कैसे प्राप्त होगा परन्तु बिना लक्ष्य के प्राप्त न हुआ, अन्धेरे में लक्ष्य साधने वाले के हथियार बेकार जाते हैं वहीं उनके साथ भी ऐसा हुआ केनोपनिषद में कहा गया है- न तत्र वाक् गच्छति न मनो न बिद्मो न विजानीमा न वहां वाणी जाती है, न मन जाता है न ज्ञान जाता है, न ही हम उसको जान सकते।

कितने सतयुग, त्रेता, द्वापर बीत गये पर ज्ञान आया तो अठ्ठाइसवें कलियुग में, आज दिन तक दुनिया के लोग आग, पानी, पत्थर में ही पारब्रह्म को ढूंढते रहे कि हमारे पूर्वजों का यही रास्ता है।- भला हम कैसे छोड़ सकते उनकी पूजा।

ऐ सोई हमारा साहेब जो बड़को दिया बताय, ए पत्थर पानी आग है, पर हमसे छोडया ना जाए- खि. १३/१

कठोपनिषद में आता है-

श्रवणापि बहुमियो न लक्षः श्रण्वन्तोऽपि
बहवो य न विधुः आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य
जब्धाश्चर्यो ज्ञाता कुसलानिष्टा। १/२/७

अर्थात् यह ब्रह्म ज्ञान पहले तो बहुतों को सुनने के लिए नहीं मिलता है यदि मिलता भी है, तो पुरानी परम्परा वाले जो सम्मान के ही इच्छुक हैं, इसे सुनने नहीं देते, सुनने पर भी बहुत से इसे समझ नहीं पाते उस परम तत्व पारब्रह्म को यर्थाथ रूप से जानने वाले और उपदेश करने वाले भी बिरले ही होते हैं।

पारब्रह्म परमात्मा प्राण बल्लभ प्राणनाथ का ज्ञान हमें इस नश्वर जगत के क्षणिक सुखों। के मोह से दूर करके अखण्ड आनन्द परम तत्व परमधाम की राह दिखाता है, जिसका अनुकरण, अनुशीलन करना प्रत्येक मानव के लिए असम्भव सा है।

इसके विपरभ्त संसार वाले देवी-देवता, अवतार पैगम्बर आदि में भटक रहे है, जिनका ज्ञान, चौदह लोक, अष्टावरण, महाशून्य निराकार तक का है। श्रीमद्भागवत के मतानुसार चार प्रलय हैं। नित्य प्रलय, नैमेतिक प्रलय, प्राकृत प्रलय, महा प्रलय, महा प्रलय में चौदह लोक से लेकर निराकार तक सब लय को प्राप्त हो जायेगा तो उनके आराध्य देव कहां बचेंगे, और उन जीवों को मोक्ष भी कैसे प्राप्त होगा?

प्यारे साथियों पुराण संहिता में कहा गया है कि- कर्लि धन्यः कर्लि धन्यः कर्लि धन्यो महेश्वर यत्र कृष्णप्रियाणां च वासना समुपाविशन् - ३२

विष्णु पुराण में- गायन्ति देवाः किल गीतकानि, धन्पास्तु ते भारत भूमिभागे। स्वर्गाष्ऽपवर्गमार्ग भूते भवन्ति भूयः पुरूष : सुरत्पात्।। - अर्थात् कलियुग और भारत की धरा धन्य है। जहां आत्माओं (वासनाओं) का अवतरण होगा। हुआ है। श्री प्राणनाथ जी व्यक्ति, सन्त, मनीषी न होकर स्वयं अक्षरातीत पारब्रह्म परमात्मा का आवेशित स्वरूप है। आनन्द सागर में लिखा है कि

प्राण रूपाः प्रियाः सर्वा तासां नाथोऽक्षरात् परः।
तेन असौ प्राणनाथः ख्यातः प्रियेश्वरः।।

प्राण से अर्थ पारब्रह्म परमात्मा की ब्रह्मात्माऐं और प्रियेश्वर प्राणेश्वर को प्राणनाथ कहा गया है क्योंकि पूर्ण ब्रह्म तों शब्दातीत, तीर या तीत है। यहां के शब्द तो निराकार को उल्लंघ नहीं सकते तो परमधाम कैसै पहुँच सकते हैं। इसलिए परमधाम में पारब्रह्म का कोई नाम नहीं है।

धाम धनी श्री प्राणनाथ जी का ज्ञान हमें इस नश्वर जगत् के क्षणिक सुखों के मोह से दूर करके अखण्ड परमधाम की राह दिखाना है, जिसका अनुकरण करना प्रत्येक मानव के बस का नहीं हैं।

बुद्ध गीता में ब्रह्मा जी नारद को ब्रह्म ज्ञान के बारे में बताते हैं कि

परमधाम परे ज्योर्तिमय दुदाहियते महत्।
तेजो मय निराकारंत्पथ त्रिगुणोरपि।। बुद्ध. गी.

अर्थात् (त्रिदेवा) जो इस ब्रह्मांड के मालिक (स्वामी) कहलाते हैं वे ही ब्रह्मा जी कहते हैं-हे नारद जी वह पारब्रह्म परमात्मा तेजस्वरूप वाला, निराकार से परे शब्दातीत महान् शोभा वाला जो त्रिगुणात्मकता से परे प्रकाशवान परमधाम में विराजमान हैं जहाँ का कण उसी परब्रह्म परमात्मा के प्रकाश से प्रकाशित है।

संसार वालो से यदि पूछा जाये कि ब्रह्मा जी अपने मुख से वेदों के मन्त्रों का जाप किस स्वरूप के लिए करते-करते समाधिस्थ हो जाते हैं, शिव जी महाराज क्यों आंखे बन्द करके ध्यान द्वारा समाधिस्थ होते हैं। भागवत के अनुसार लक्ष्मी जी के सात कल्पान्त तपस्या करने पर भी विष्णु जी नहीं बता पाये कि मैं किसके ध्यान में मग्न रहता हूँ।

और प्यारे साथियों उपरोक्त त्रिगुणात्मक शक्तियां पारब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत तक उनका ध्यान नहीं पहुँचता वे तो-

प्रकृति पैदा करे, ऐसे कई इण्ड आलम।
ए ठौर माया ब्रह्म सबलिक, त्रिगुन की
परआतम।। कि. ६५/१०

श्री प्राणनाथ जी को इस दनिया में आये लगभग साढ़े तीन सो वर्ष हो गये हैं, इतने अल्प समय में भी आज दुनिया के लाखों व्यक्ति श्री प्राणनाथ जी को पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द मानते हैं। योगमाया के ब्रह्मांड में जब न्याय की लीला होगी और

प्राणनाथ का स्वरूप सिंहासन पर विराजमान होगा, जब जाग्रत बुद्धि के मिलने से १४ लोकों का यह सम्पूर्ण क्षर ब्रह्माण्ड एक स्वर में उन्हें पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द के रूप में मानेगा।

श्री धनी जी को दीदार सब देख, होए गई दुनिया सब एक।
किनहु कछुए ना कहयो, क्रोध बोध काहु का ना रहयो।। प्र.हि. ३६/११०

योगमाया के ब्रह्माण्ड में श्री प्राणनाथ जी का दर्शन करके सारी दुनिया एक रस हो जायेगी। उस समय सभी अपने क्रोध- विरोध का परित्याग करके सारी दुनिया एक रस हो जाएगी। उस समय कोई किसी के अवगुण नहीं देखेगा।

सब जाते मिली एक ठौर, कोई न कहे धनी मेरा और।
पिया के बिरह सो निरमल किए, पीछे अखंड सुख सबो को दिए।।

योगमाया के ब्रह्मांड में इस दुनिया की सब जाति, धर्म, पन्थ, सम्प्रदाय, एक साथ एक स्थान पर मिलेगी, सब जाग्रत बुद्धि व नूर मयी अखंड तथ्य प्राप्त होंगे, जिन्होंने हकी स्वरूप श्री प्राणनाथ जी की पहचान नहीं की थी केवल वे जीव वहां पर पश्चाताप के कारण विरह में तड़फेंगें और तब वे निर्मल होकर अष्ट बहिश्तों का अखंड सुख लेगें।

खसम के आगे अब, क्यों उठावे सिर।
सब अंग आग जो हो रही, होए झाले उठे फेर फेर।। सं. २६/२६

अब वे ही श्री प्राणनाथ जी के आगे सिर उठा कर कैसे देखेंगे?क्योंकि उस समय उनके सारे अंग पश्चाताप की अग्नि में जल रहे होंगे और वें हाय-हाय कर रहे होंगे।

श्री प्राणनाथ जी इस संसार में अब तक पूर्ण रूप से क्यों नहीं जाहिर हुए हैं?इसका उत्तर वे स्वयं ही अपने मुख से देंगे।

कोई दिन हम छिपे रहे, सो भी मोमिनों के सुख काज।
जो होवे नेक जाहिर, तो रहयो न पकरयो आवाज।। स.२२/४५

आज दिन मैं अपनी ब्रह्मसृष्टि के वास्ते छिपा रहा। तांकि वे खेल का आनन्द पूर्ण रूप से ले सकें। यदि मैं अपने को थोड़ा सा भी जाहेर होने देता तो मेरी आवाज चारों औंर फैल जाती, अर्थात् मेरे स्वरूप की पहचान दुनिया को हो जाती।

एक उजास इन भांत का, जो कबुं निकसी किरन।
तो पसरसी एक पल में, चारों तरफों सब धरन।। क. हि. १०/१६

श्री प्राणनाथ जी की वाणी में ज्ञान का उजाला इस प्रकार है कि यदि एक किरण भी बाहर निकल आयी होती तो एक पल में चौदह लोकों में फैल जाएगी।

अक्षरातीत पारब्रह्म श्री प्राणनाथ जी हकी स्वरूप जी के अनमोल ज्ञान को दुनिया के लोग तेजी से क्यों नही ग्रहण कर पाते हैं इनका उत्तर श्री मुखवाणी में इस प्रकार हैं।

जो कबुं कानो ना सुनी, सो सुनते जीव उरसाए।

तार्थें डरती मैं कहुं जान, जिन कोई गोते खाए।।
क. हि. २४/४

स्वलीला अद्वैत पारब्रह्म के जिस ज्ञान को आज दिन तक किसी ने सुना नहीं, उसे सुनते ही जीव उलझन में पड़ जाता है। इसलिए श्री महामति जी कहती हैं कि मैं संभल- संभल कर कहती हूं । जिससे कोई भी संशय में न पड़ जाये।

श्री महामति जी कहती हैं कि मैं पूर्ण रूप से उस ज्ञान को जाहिर कर देती, क्योंकि तुम्हारे से कोई अन्तर नहीं है। इसलिए तुम्हें सावधान कर के तुम्हारे वास्ते ही थोड़ा कहती हूँ। और अक्षर-ब्रह्म की पूर्ण चाहना श्री- प्राणनाथ जी ने ही पूर्ण की श्री कृष्ण जी ने नहीं- इस्क (अनन्य प्रेम) के विलास की लीला एक मात्र वाहेदत के अन्दर ही सम्भव है। योगमाया में अद्वैत अखंड भूमिका तो अवश्य है किंतु स्वलीला अद्वैत वाहेदत की लीला नहीं है। अक्षरातीत की इश्कमयी लीला के अन्दर स्वलीला अद्वैत (वाहेदत) एक दिली का क्या रहस्य है स्वयं अक्षर ब्रह्म भी इसे जानने के लिए आतुर है।

अक्षरातीत के मोहोल में, प्रेम इस्क बरतत।
सो सुध अक्षर को नहीं, जो किन विध केल करत।। कि. ७४/२८

श्री कृष्ण जी के तन में स्थित होकर अक्षर-ब्रह्म की आत्मा ने ११ वर्ष में प्रेम का अनुभव तो कर लिया किन्तु प्रेम के विलास का रास कालमाया के ब्रह्माण्ड में पंच भौतिक तनों से होना असंभव था। प्रेम का स्वरूप केवल अक्षरातीत पूरण ब्रह्म प्राणनाथ जी हीं हैं। और जहां लौकिक नियमों की मर्यादा है वहां पर प्रेम के विलास की यर्थाथ लीला सम्भव नहीं है। अतः अक्षरब्रह्म की उस इच्छा को पूर्ण करने के लिए प्राणबल्लभ ने सखियों को योगमाया के नूरी तन देकर प्रेम विलास की लीला की।

रास के पश्चात अक्षरब्रह्म की आत्मा अरब में मुहम्मद-साहब के रूप में प्रकट हुयी ''रास खेलकर बरारब आये श्याम'' श्री मुख। जब उन्हें मेयराज हुआ और पारब्रह्म- परमात्मा ने अक्षर-ब्रह्म की सुरता को कालमाया परमधाम लाकर अपना (इश्क) प्रेम दिया। खिलवत खाने में भी प्रवेश कराया तब बसरी सूरत ने युगल स्वरूप व परातम की शोभा श्रंगार के दर्शन किए, उन्होंने- श्री जमुनाजी, हौज कौसर, मूल-मिलावे आदि के दर्शन के साथ-साथ धनी से ६०००० बातें भी की पर इतना सुनने पर भी जमुना लांधते वक्त निज बुध से रहित हो जाने पर मारफत की सारी बाते भूल गये।

सतगुरू श्री देवचन्द्र जी के अन्दर अक्षर ब्रह्म की आत्मा नहीं थी जब नश्वर तन को छोड़कर श्री इन्द्रावती के तन मे प्रवेश किया तो-

अक्षर ब्रह्म की जाग्रत-बुद्धि (असराफिल) रास लीला के पश्चात, इस समय की बाट निहार रही थी कि-मुझे कब परमधाम की वाहेदत और खिलवत का रहस्य जानने का अवसर मिलेगा।

धनी मेरे ध्यान तुम्हारे, बैठे बुध जी बरस सहस्त्र चार।
छै से साठ बीता सम, दुनिया को भयो आचार।।
कि. ५३/१

श्री महामति जी कहती हैं कि हे धाम-धनी

रास की रात्रि के बाद वि. सं. १६३५ तक ४६६० वर्ष व्यतीत हो गये और आज दिनतक अक्षर ब्रह्म की बुद्धि आपके इन्तजार में बैठी थी। वि. स. १६३५ से श्री श्यामाजी के पातसाहीके चालीस वर्ष प्रारम्भ होते हैं। जब तक स्यामा जी की फरामोशी दूर न हो तब तक युगल-स्वरूप की शोभा श्रृंगार की वाणी का अवतरण होना सम्भव नहीं था-

आवेश जाको मैं देखूं पूरे, जोगमाया की नींद होए।
पर जो सुख दीसे जागनी, हम बिना न जाने कोए।। क. हि. २३/४६

श्री देवचन्द्र जी के तन में निजबुद्धि न होने से वे पूरण रूप से जाग्रतावस्था को प्राप्त नहीं कर सके, उनके तन से जागनी सिर्फ ३१३ आत्माओं की ही हो पाई थी, ये सब धनी के ही हुक्म कारागरी से हुयी।

सुन्दर बाई देख्या, दिल के दीदो मांहे।
बृज रास और धाम की, पर जागनी कों सुध नाहे।। सं. ४१/१६

संवत १७३५ के पश्चात् ही १७४० से १७४८ तक श्री पन्ना जी में खिलवत, परिकरमा, सागर और सिनगार ग्रन्थ की वाणी का अवतरण हुआ। सागर और सिंगार की वाणी बिना निज बुद्ध के अवतरित हो ही नहीं सकती थी।

इन्द्रावती पिया संगे, उदर फल उतपन।
एक निज बुध अवतरी, दूजा नूर तारतम।। क. हि. २३/६१

अक्षर ब्रह्म की जागृत बुद्धि कभी भी अक्षरातीत की निज बुद्धि के अभाव में परमधाम के गुझ-भेद की चारों किताबें खिलवत, परिकरमा, सागर, सिंगार का रस नहीं ले सकती थी। इसलिए वि.सं. १७३५ तक वह अवसर की प्रतीक्षा में थी। इसके पहले वह ब्रज-रास के आनन्द में मग्न थी।

चारों किताबों के अवतरित होने पर ही उसे परमधाम में युगल स्वरूप की शोभा तथा २५ पक्षों एवं रंग महल की वाहेदत की स्वलीला का ज्ञान हो गया जो इससे पहले नहीं था।

मेरी संगते ऐसी सुधरी, बुध बडी हुई अक्षर।
तारतमें सब सुध परी, लीला अन्दर की घर।।
क. हि. २३/१०३

सत्सरूप में ब्रह्मसृष्टि के जीवों की जो पहली बहिस्त बनेगी उसमें परमधाम में होने वाली अष्ट प्रहर की सम्पूर्ण लीला की नकल हुआ करेगी, जिसका रसपान अक्षरब्रह्म किया करेगें। इस प्रकार स्वलीला अद्वैत पारब्रह्म की वाहेदत के गुझ-रहस्य को श्री महामति जी के तन में स्थित हो कर ही अक्षरब्रह्म ने जाना, और अपनी उस पहली चाहना को पूरा कर लिया जो श्री कृष्ण और मुहम्मद के तन में नहीं हो सकी थी।-

सो नूर सरूप आवे नित, नूर तज्जला के दीदार।
आस पुराई इनकी, मेरे ऐसे इन आकार।। कि. ६१/२६

सुन्दरसाथ जी बृज-रास में तो अक्षरब्रह्म ने परमधाम की प्रेम लीला को एक नाटक की तरह देखा, किन्तु सत्सरूप की पहली बहिस्त मे वे साक्षात् की तरह ही उसका आनन्द लेगें।

राजबाला सरसावा
ज्ञानपीठ

श्री मुखवाणी (ब्रह्मज्ञान)

सुन्दरसाथ जी,

इस संसार का नियम है कि जो व्यक्ति कुछ विशेष कला, हुनर सीखना चाहता है, पहले वह उसकी जानकारी, ज्ञान, ट्रेनिंग प्राप्त करता है। जैसे डॉकटर बनने के लिए मेडिकल साइंस आई० ए० एस० या पी० सी० एस० बनने के लिए इनसे संबन्धित ज्ञान आवश्यक है। इसी प्रकार क्रिकेट, फुटबॉल इत्यादि में भी। तभी वह अपने क्षेत्र में कुशल तथा सफल माना जाता है। इसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्र में बढ़ने के लिए भी अध्यात्म संबन्धी ज्ञान आवश्यक है।

ब्रह्मवाणी के रूप में हमें बिना प्रयास किये ये अनमोल खजाना उपलब्ध है, इस पर ही आज हम विचार करेंगें। सुन्दरसाथ जी, राज जी (हक) का इलम (ब्रह्मज्ञान) हमारे सब आध्यात्मिक रास्तों को खोलता है तथा हमें हमारे परम लक्ष्य, परमतत्व तक आसानी से पहुँचा देता है। मनुष्य जीवन का मुख्य लक्ष्य पारब्रह्म को प्राप्त करना है। ब्रह्मसृष्टि यहाँ माया के संसार को सुरता, हुकम से देख रही है। यहाँ आकर वह अपने धनी अक्षरातीत, अपने परमधाम तथा अपने मूलस्वरूप परआतम को भी भूल गयी है।

पहले कह्या मैं तुमको, भूलोगे खेल देख ।

जहाँ झूठे झूठा खेलहीं, उत मुझे न पाओ एक ।। खिलवत १५/३३

ना मानोगे संदेशे, ना मुझे करोगे याद ।

झूठा कबीला करोगे, लगसी झूठा स्वाद ।। खिलवत १५/३५

इस मुखवाणी (ब्रह्मज्ञान) पर गंभीरता से विचार कीजिए- यह हमें अपने घर की याद दिला रही है, सुख दे रही है। अगर हम इसे मनन, पठन ना करें तो हमें अपने घर की कैसे याद आयेगी?हमारे धनी (राज जी) तो मेहेरबान हैं, उन्होंने तो सब सखियों को परमधाम का कुल खजाना (ब्रह्मवाणी) भेज दी है और स्वयं वाणी में कह रहे हैं कि वाणी पढ़कर तो देखो, तुमको अपने आप जागृति आयेगी।

फुरमान लिख्या इन विध का, जो पढ़ के देखें ए ।

एक जरा सक ना रहे, तब हीं जागे हिरदे ।। खिलवत १५/४२

धनी कहते है कि -

जब इलम मेरा पोहोंचिया, तब ए होसी बेसक ।

तब साइत ना रहे सकें, ऐसे इनों का इस्क ।। खिलवत १५/६

यह श्री मुखवाणी (कुलजम स्वरूप) मेरे परमधाम की है। इससे ब्रह्मसृष्टि स्वयं को, अपने धनी को, परमधाम को सरलता से जान जायेगी तभी उनकी सुरता/ ध्यान वापस लौटेगी। यह हमारा अपना ज्ञान है, यह परमधाम की कुन्जी है।

कई दुनिया में बुजरक हुए, किन बका तरफ पाई नाहें ।

ए इलम नुकता ईसे का, बैठावे बका मांहें ।। खिलवत ७/३

इलम लदुन्नी हक का, कुंजी बका की जे ।

मेहेर करी मुझ ऊपर, खोल दिये पट ए ।। खिलवत ६/३

आत्मजागृति के लिए अपने धनी परब्रह्म सच्चिदानन्द के स्वरूप की पहचान आवश्यक है। श्री राज जी क्षर -अक्षर से परे अक्षरातीत हैं। अविनाशी हैं। पूरे परमधाम में एक नूरमयी चेतन तत्व है जो कोमलता तथा सुगन्धि से भरपूर है। राज जी सबको प्रकाशित करने वाले एक रस हैं। यह तत्व संसार में नहीं आ सकता है।

''कंकरी एक अर्स की उड़ावे चौदे तबक ।''

श्री राज श्यामा जी का स्वरूप, वस्त्र, आभूषण कैसे हैं?हक का इलम (मुखवाणी) इन सबकी पूर्ण जानकारी देकर पूर्ण पहचान कराता है। तब हम दूर नहीं है।

और भी कहूं सो सुनो, मोमिन अर्स से आए उतर ।

इलम दिया हकें अपना, अब इनों जुदे कहिए क्यों कर ।। सिनगार २२/१३२

यह ब्रह्मवाणी सब संशयों का निवारण करती है। जब तक शक है हम अपने धनी की ओर नहीं बढ़ सकते हैं। यह श्री मुखवाणी संशयों को स्वयं दूर करती है। इसका अनुभव वाणी को मनन करने वाले स्वयं करते रहते हैं। वाणी पढ़ने से बेशकी धीरे-धीर बढ़ती है। इलम (ज्ञान) से बेशकी आई तो हम धनी से दूर नहीं हैं। और सुन्दरसाथ जी हमारी आत्म लगन भी धनी को पाने को बढ़ती है।

अर्श रूहें हक बिना ना रहें, विरहा न सहें एक खिन ।

जब इलमें हुई अर्स बेसकी, रूहें रहें ना बिना वतन ।। सिनगार २४/२०

और राज जी की वाणी, पढ़ने से विचारने से ही इश्क बढ़ता है। बिना इश्क के हम परमधाम नहीं पहुँच सकते हैं। अतः इस इलम (ब्रह्मवाणी/मुखवाणी) का ही एक मात्र सहारा मोमिनों (प्रेमी सुन्दरसाथ) को है।

जात हक की कहावहीं, और कहावें माहें वाहेदत ।

जो इलम विचारे हक का, ताको इस्क बढ़त ।। सागर ४/२५

आप अपने अर्स में, जाए न सके बिना इलम ।

तो फुरमान इलम भेजियां, रूहें दरगाही जान खसम ।। सिनगार २७/४३

सुन्दरसाथ जी,

इस संसार की कोई भी तपस्या, साधना, भक्ति, जप, तप, कसनी आदि से अन्तरदृष्टि नहीं खुलती है। कितना भी प्रयास कर लिया जाये सब असफल ही रहता है। श्री मुखवाणी विचारने से इतनी प्रबल शक्ति है कि अन्तरदृष्टि बिना किसी प्रयास के तुरन्त खुलती है और परमधाम तथा धाम धनी अक्षरातीत को अपने अन्तरदृष्टि खुलने पर या बातूनी नजर से देखा जा सकता है।

ऐसा इलम हकें भेजिथा, आंखे खोल दई बातन ।

एक जरा सक ना रही, देखे बका वतन ।।

खिलवत १५/५२

ए याद नीके दीजियों, तुम देखो सहूर कर ।
मेरे इलम से रूहों को, देवे साहेदी अन्तर ।।
खिलवत १५/५४

श्री मुखवाणी के अनुसार रहनी पर बहुत जोर दिया जाता है परन्तु वाणी के अनुसार किसी की भी रहनी शत प्रतिशत नहीं बन पाती है। अनेक बाधाएं, विघ्न तथा सांसारिक वातावरण, परिस्थितियाँ अड़चने डालती हैं। इस श्री मुखवाणी को मनन करने से विचारने से कहनी, करनी, रहनी, (कौल, फैल, हाल) अपने आप बदलते जाते हैं। समदृष्टि आ जाती है। अपने- पराये का भेद मिट जाता है।

सो ए इलम जब हक का, देत अर्स की याद ।
तुम बेसक गुजरे हाल की, क्यों न आवे कायम स्वाद ।। खिलवत १५/६६

परमधाम में मूल मिलावे में सब सखियाँ श्री राज जी के चरणों में बैठी हैं। श्री राज जी को छोड़कर श्यामा जी सहित सब पर फरामोशी (नींद का आवरण) है। उसी से परमधाम, श्री राज जी तथा अपने परात्म को भूली हुई हैं। सुन्दरसाथ जी इस श्री मुखवाणी (हक का इलम) के पठन, मनन, विचारने से ही फरामोशी हटेगी। अन्य कोई भी प्रयास, साधन से यह फरामोशी नहीं जायेगी। यह बेशक इलम ही इसकी दवा है। यह इलम ही मोमिनों के लिए न्यामत (खजाना) है, बकसीस है। उनकी अपार कृपा है।

फरामोसी कुलफ की, कुंजी इलम बेशक ।
करो सहूर तुम रूह सों, जो बकसीस है हक ।। खिलवत १५/६७

मैंने हमेशा देखा है अधिकतर सुन्दरसाथ जी कहते हैं कि हम तो हुकम से बंधे हैं। यहाँ सब हुकम से हो रहा है। वास्तव में इस तथ्य में कोई शक नहीं, सब धनी के अनुसार उनकी इच्छा से हो रहा है। परन्तु नहीं भूलना चाहिए यह कि यह हक इलम (मुखवाणी) उनके हुकम से उतरी है। और उनका हुकम का स्वरूप है। श्री मुखवाणी स्पष्ट शब्दों में हिदायत कर रही है कि जहाँ श्री मुखवाणी जायेगी वहाँ हुकम तो अपने आप उपस्थित रहेगा।

कोई दम न उठे हुकम बिना, कोई हिले न हुकम बिना पात ।
तहाँ मुतलक हुकम क्यों नहीं, जहाँ बरनन होत हक जात ।। सिनगार २/६२

आत्म की जाग्रति के लिए वाणी का ही सहारा सबको लेना है। धाम धनी श्री राज जी कह रहे हैं कि मेरे इस इलम के बिना तो एक भी होश में नहीं आई है। परमधाम में तुम सब अपना इश्क बड़ा कह कर आई हो। यह श्री मुखवाणी श्री राज जी महाराज के दिल का प्यार है, उनकी न्यामत (खजाना) है। इसीलिए कहा गया है कि आत्म जाग्रति के लिए हक इलम की आँखें चाहिए।

इत आँखें चाहिए हक इलम की, तो हक देखिए नैना बातन ।
नैना बातून खुले हक इलमें, ए सहूर है बीच मोमिन ।।

प्रणाम जी

(प्रीति खतौली)

''ध्यान''

हमारा लक्ष्य है मूल मिलावें में सिंहासन पर श्री युगल स्वरूप श्री राज श्यामा जी प्रियतम अक्षरातीत को अपने आत्म चक्षुओं से देखना। यह चितवन- ध्यान के द्वारा ही हो सकता है। पांच यम पांच नियम योग के दो अंग हैं। यम क्या हैं?अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

पाँच नियम क्या हैं?शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान। ध्यान की प्रक्रिया में गुजरने के लिए इन पांचों का पालन करना पड़ता है। जैसे कोई मकान बनाना होता है तो उसकी नींव जैसी होगी, वैसा ही भवन बनेगा। यदि नींव कमजोर होगी तो यह आशा नहीं कर सकते कि विशाल भवन खड़ा हो सकेगा।

ये पांचों यम- नियम किसी भी आध्यात्मिक भवन की आधार शिला हैं। अध्यात्म साधना की नींव हैं।

यदि हम रात-दिन आंखें बन्द करके ध्यान में बैठें और इनकी मर्यादाओं का उल्लंधन करें तो याद रखिये हम कभी भी शिखर तक नहीं पहुँच सकते। लेकिन यह भी याद रखिये कि जो भी सच्चे हृदय से उस प्रियतम का ध्यान करता है, वह चाहे कितना भी बड़ा पापी क्यों न हो, वह अवश्य ही पांच यम- नियमों का पालन कर लेगा। लेकिन यदि कोई चाहे कि हम उस परमात्मा से प्रेम न करें राज जी की चितवनि न करें और पांच यम- नियमों का सरलता से पालन करें तो यह सम्भव नहीं हो सकता।

दोनों में चोली दामन का साथ है। इश्क का प्राण इलम है और इलम का प्राण इश्क। जैसे इलम के बिना इश्क नहीं और इश्क के बिना इलम नहीं वैसे ही पांच यम-नियमों का पालन किये बिना आप ध्यान में पारंगत नहीं हो सकते और ध्यान किये बिना इन पांचों का पालन नहीं कर सकते।

यदि कोई यह सोचे कि इन पांचों का पालन करने के बाद ही हम चितवनि (ध्यान) में लगेंगे तो यह भ्रम है। क्योंकि हमारे चित में जन्म जन्मान्तरों की वासनायें भरी हैं, जिनको हम देख नहीं पाते। कल्पना कीजियेए इस जन्म में यदि हम अच्छी शिक्षा- दीक्षा ले लें तो हमारे अन्दर अच्छे संस्कार आ सकते हैं। हम चोरी नहीं करते, झूठ नहीं बोलते डकैती नहीं करते कटु वचन नहीं बोलते माँस नहीं खाते, शराब नहीं पीते, लेकिन पूर्वजन्मों में यदि हमने ये सारे कर्म कर रखे हैं तो कभी भी, जहां अवसर मिला तो जिस तरह से हवा के झोंके से अग्नि की लपटें तेज हो जाती, हैं उसी तरह से अवसर मिलते ही पुराने जन्मों के बुरे संस्कार हमारे ऊपर कभी भी हावी हो सकते हैं।

पहली वस्तु है अंहिसा। अहिंसा किसको कहते हैं?बोलचाल में इसका अर्थ लगाया जाता है कि किसी को मारना हिंसा है और किसी प्राणी की हिंसा न करना अंहिसा है।

शरीर, वाणी तथा मन से किसी को भी शारीरिक या मानसिक पीड़ा देना हिंसा है। यह तीन प्रकार की है-

१. शारीरिक हिंसा

२. मानसिक हिंसा

३. वाचिक हिंसा

शारीरिक हिंसा- किसी भी प्राणी के शारीरिक अंगों को क्षत- विक्षत करना या प्राणरहित कर देना महापाप है और यही शारीरिक हिंसा है।

''मुर्गों की गर्दन काटना बकरों की गर्दन काटना।''

हिंसा करने वाला स्वाभावतः क्रूर होता है। वह कभी भी आत्म साक्षात्मार का अधिकारी नहीं बन सकता।

(२) मानसिक हिंसा- कल्पना कीजिये कि आपको किसी व्यक्ति ने कोई धोखा दे दिया। आप एकान्त में सोचते हैं कि मैं उसे मरवा डालूंगा या उसके ऊपर मैं पत्थर फेंक दूं, यह भी एक प्रकार की हिंसा है। भले ही आप इस बात को वाणी से नहीं कर रहे हैं, लेकिन मन में तो आपका एक युद्ध चल रहा है। मानसिक हिंसा भी हिंसा ही है। यदि आपको किसी ने कटुवचन, कह दिया और जिन्दगी भर आप उन कटुवचनों को याद रखते हैं, उनके प्रति घृणा की भावना भरे रहते हैं। तो यह भी एक प्रकार की मानसिक हिंसा ही है।

(३) वाचिक हिंसा- धर्म शास्त्रों का कथन है- ''तलवारों के घाव तो भर सकते हैं, लेकिन कड़वे वचनों का घाव कभी भी नहीं भर सकता।

द्रोपदी की कड़वी बोली ने महाभारत का युद्ध करवाया।

सीता ने अपशब्द कह दिया क्रोध में।

कटु और मन भेदी वचनों से किसी को पीड़ित करना वाचिक हिंसा है। यहां एक संशय होता है कि योगेश्वर श्री कृष्ण भगवान शिव, विष्णु एवं मर्यादा पुरूषोतम राम आदि ने भी लाखों राक्षसों का वध किया था तो क्या ये हिंसक नहीं थे?इन्हे योगेश्वर क्यों कहा जाता है?

इसके समाधान में यही कहा जा सकता है कि ये सभी महापुरूष, अहिंसक और योगी इसलिये कहे गये हैं क्योंकि इनके द्वारा की गयी हिंसा अहिंसा की रक्षा के लिये थी। इनके मन में किसी भी प्रकार का लोभ या द्वेष नहीं मानवता की रक्षा के लिये ही इन्होंने शस्त्र उठाया। यदि ये राक्षसों का वध नहीं करते तो मानव मात्र का जीवन संकट में पड़ जाता।

(सत्य)

सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म।

ब्रह्म सत्य स्वरूप, ज्ञान स्वरूप और अनन्त है

ये पृथ्वी सत्य (ब्रह्म) से टिकी, हुई है। उस

परब्रह्म को पाने के लिये हमें मन वाणी एवं कर्म से सत्य का आचरण करना ही होगा।

सांचा री साहेब, सांच सो पाइए।
साच को सांच है प्यारा।।

सत्य बोलें, प्रिय बोलें, हितकारी बोलें, कभी भी सपने में झूठ न बोलें, हमेशा मन में कभी भी किसी के लिये ऐसा कटु वचन न बोलें, जिससे उसके हृदय में चोट पहुंचे।

सत्य ही धर्म हैं और सत्य ही परमात्मा है। परमात्मा कहते है जो सत्य हो, चेतन हो और आनन्द मय हो।

एक गाय जा रही है। कसाई उसको पकड़ना चाहता है। कसाई आपसे पूछता है कि क्या उधर गाय गई?आप क्या उत्तर देंगें?या तो आप चुप हो जाइए या बोल दीजिये कि हमें मालूम नहीं। लेकिन जिधर गाय गई है मत कहिये। जो सत्य का आचरण करेगा, उसकी सारी समस्याओं का समाधान स्वतः ही हो जायेगा। झूठ सारी समस्याओं की जड़ है। एक झूठ को छिपाने के लिये न जाने कितने झूठ बोलने पड़ते हैं।

जिसने मन से, वाणी से और कर्म से सत्य का आचरण किया है, वह जीवन में कभी भी दुःखी नहीं हो सकता है।

(अस्तेय)- चोरी न करना

जो भी सरकार आती है, झूठे, लुभावने वायदे करती है कि हम गरीबी मिटा देंगे। कोई भी सरकार या कोई भी व्यक्ति तब तक गरीबी नहीं मिटा सकता जब तक इस देश के लोग चोरी करना नहीं छोड़ देंगे। आप जानते ही है कि मंत्री लोग कितने धर्मात्मा होते हैं?अधिकतर मन्त्रियों के विदेशों में पैसे जमा रहते हैं।

इस देश के सब्जी बेचने वाले से लेकर मन्त्री तक, चाहे वे केन्द्र के बड़े-बड़े मन्त्री या प्रान्त के मन्त्री हों, बड़े अधिकारी हों, मैं समझता हूँ, अधिकतर लोगों में किसी न किसी रूप में चोरी की प्रवृति है। जब तक इस देश के लोग चोरी करना नहीं छोड़ेंगे, तब तक यह देश कभी भी धनवान नहीं बन सकता।

सरकारी कर्मचारी जो भरपूर वेतन लेकर भी कार्य नहीं करते हैं, एक प्रकार से चोरी करते हैं। बिना टिकट के यात्रा करना, चाहे वे साधुजन ही क्यों न हों एक प्रकार से चोरी ही होती है। बड़-बडी कम्पनियों के स्वामी जो थोड़ा वेतन देकर अधिक कार्य लेते है खुद दोषी हैं। सीमा से अधिक फीस लेने वाले डाक्टर या वकील भी स्तेय के दाषी हैं, क्यांकि वे अपने रोगी या जन साधरण को अपने जाल में फंसाये रखते हैं। अधिक लाभ की दृष्टि से मिलावट

करने वाले व्यापारी तथा घूस लेने वाले अधिकारी चोरी के अपराधी माने जायंगे। राष्ट्रीय सम्पति का अपहरण कर विदेशों मे जमा करने वाले मन्त्री, अधिकारी एवं व्यापारी भी स्तेय के अपराधी हैं।

भारतवर्ष की गरीबी का मुख्य कारण चोरी की प्रवृति है।

(ब्रह्मचर्य) ब्रह्मचर्य तीन प्रकार का होता है

१. शारीरिक

२. मानसिक

३. आत्मिक

ब्रह्मचर्य का भाव यह मत समझ लीजिये कि इस देश में ८० लाख महात्मा हैं तो ८० लाख ब्रह्मचारी हैं। विवाह न करने का आशय ब्रह्मचारी होना नहीं होता है। ब्रह्मचर्य का अर्थ होता है ब्रह्म में विचरण करना। ब्रह्म निर्विकार है, आप भी निर्विकार बनिए ब्रह्म सत्यवादी है, सत्य स्वरूप है, आप भी मन, वाणी और कर्म से सत्य का पालन कीजिए।

जो रात्रि को सोने से पहले और सबुह उठते ही राजजी के ध्यान में डूब जाता है परमधाम में घूमता है तो वह ब्रह्मचर्य का पालन कर रहा है। वह ब्रह्म में विचरण कर रहा है। यदि किसी ने विवाह नहीं कराया और वह ध्यान नहीं करता है फिर भी कहता है कि मैं ब्रह्मचारी हूँ तो वह झूठ बोल रहा है वह मात्र शारीरिक ब्रह्मचर्य है।

मानसिक ब्रह्मचारी के मन में भी विषय- भोग की इच्छा नहीं होनी चाहिये।

आत्मा के द्वारा प्रियतम परब्रह्म के प्रेम में विचरण करना ही आत्मिक ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य के द्वारा विद्वानों ने मृत्यु को भी जीत लिया। सम्पूर्ण प्राणिवर्ग में जो सौन्दर्य, तेज, बुद्धि, आनन्द, उत्साह, शक्ति आकर्षण या सजीवता आदि गुण दिखायी देते हैं उसके मूल में ब्रह्मचर्य ही है। ब्रह्मचारी व्यक्ति के लिये जीवन के किसी भी क्षेत्र में शिखर पर पहुँचना असम्भव नहीं है।

(अपरिग्रह) अपरिग्रह का अर्थ होता है आवश्यकता से अधिक किसी वस्तु का सचंय न करना। संसार (४ सूटों से काम चल जाता है! २० जोड़े तो होने ही चाहिए) में दुःखों का कारण क्या है?परिग्रह की प्रवृति। संचय किसका करना चाहिये?गुणों का संचय करना चाहिये। दत्तात्रेय ने चौबीस गुरू किये। जिससे शिक्षा मिली गुरू मान लिया। आपके हृदय में ज्ञान के अनमोल मोती मिल जाये इससे बड़ा सौभाग्य और कुछ नहीं होगा।

धन का अनावश्यक संग्रह नहीं करना चाहिये। आज सारा संसार इसी में लगा हुआ है। पड़ोसी के पास दो कारें है तो मेरे पास चार कारें होनी चाहिए। यही संस्कृति भारत में भी पनपती जा रही है। शरीर का क्या भरोसा है?चलते चलते अटैक

हो गया, शरीर छूट जाय धन यहीं रह जायेगा, सगे सम्बन्धी यही रह जायेंगे।

मेरी-मेरी करत दुनी जात है, बोझ ब्रह्माण्ड सिर लेवे।
पांव पलक का नहीं भरोसा, तो भी सिर सरजन को न देवे।।

आज हर व्यक्ति केवल अपने सुख की ही चिन्ता करता है। हम साथ-साथ चलें, साथ साथ बोलें, हम सबके मन एक हो! योग का दूसरा अंग नियम है

शौच- (पवित्रता) बाह्य और आन्तरिक पवित्रता धर्म का प्रमुख अंग है। बाह्य पवित्रता का सम्बन्ध स्थूल शरीर से है तथा आन्तरिक पवित्रता का सम्बन्ध अन्तः करण की शुद्धता से है।

मनुस्मृति में कहा गया है कि जल से शरीर शुद्ध होता है। सत्य का पालन करने से मन शुद्ध होता है। विद्या और तप से जीव शुद्ध होता है तथा ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होती है। वस्तुतः शौच का यही वास्तविक स्वरूप है।

यह तो निश्चित है कि जितना ध्यान हम बाहरी शरीर को शुद्ध करने पर देते हैं, उतना यदि दिल को पवित्र कर लें, तो हमारे प्रियतम अक्षरातीत आधे पल के लिये भी हमसे दूर नहीं हैं-

जैसा बाहेर होत है, जो होए ऐसा दिल।
तो अधखिन पिउ न्यारा नहीं, माहे रहे हिल मिल।।

बाह्य शौच में ध्यान करने वाले को समय पर शौच अर्थात मल शुद्धि अवश्य करनी चाहिये। मल और मूत्र के वेग को कभी भी रोकिये नहीं क्योंकि इसको रोकने से शरीर में तरह- तरह के रोग पैदा हो जायेगे।

आन्तरिक शौच का तात्पर्य यह है- चित्त, मन एवं इन्द्रियों को शुद्ध रखना और परिणाम आत्मा के साक्षत्कार की योग्यता प्राप्त होती है। यदि आपने आन्तरिक पवित्रता धारण कर ली, हृदय को पवित्र कर लिया, तो यही हृदय की पवित्रता आपको आत्मदर्शन तक ले जायेगी, परमात्मा के दर्शन तक ले जायेगी।

संतोष - संतोष का तात्पर्य क्या है?दुःखी होने का कारण क्या है?असंतोष।

गोधन गजधन बाजिधन, और रतनधन खानि।
जब आवे संतोष धन, तब सब धन धूलि समानि।।

यदि आपने संतोष धन प्राप्त कर लिया तो सारी पृथ्वी का धन भी मिट्टी के समान लगेगा।

रूखी सूखी खाय के ठंडा पानी पी।
देख पराई चोपड़ी ना तरसाओ जी।।

जो मिल गया उसे में संतोष। संतोष की

प्रवृति जिसने अपना ली, उसको उत्तम से उत्तम सुख की प्राप्ति होती है। सुखी कौन है?जो संतोषी है। आज एक गाड़ी है। अगले साल इच्छा है कि चार गांड़ियां हो जायें, उसके बाद चाहेंगे कि दस गाड़िया हो जायें। फिर भी संतोष नहीं। इन्हीं तृष्णाओं को पूरा करते-करते हम बूढ़े हो जायेंगे और आध्यात्मिक शान्ति से कोसों दूर हो जायेंगे। इसलिये जो मिला है, उसी में मुस्कारते रहिये।

परमहंस महाराज श्री राम रतनदास जी कहा करते थे कि कभी घी घने, अर्थात कभी घी के बने अच्छे व्यंजन मिल जाये कभी मुटठी भर चने और कभी वे भी मने अर्थात् कभी हो सकता है कि दो मुट्ठी भर चना भी न मिले। तब भी आप मुस्कराते रहिये।

पिया जी तुम हो तैसी कीजियों.....

(स्वाध्याय)- आध्यात्मिक ज्ञान देने वाले धर्म शास्त्रों का अध्ययन करना और सत्संग करना स्वाध्याय कहलाता है। मोक्ष का ज्ञान देने वाले वेदादि ग्रन्थों का अध्ययन या आत्म चिन्तन- परमात्म चिन्तन स्वाध्याय कहलाता है। स्वाध्याय से ऋषि मुनि और विद्वानों का सत्संग मिलता है। यदि आप प्रतिदिन स्वाध्याय करते रहेंगे तो ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जायेगी। हिन्दुस्तानियों की आदत है व्यर्थ की गप्पें मारने की। हमें अपनी प्रवृति बदलनी पड़ेगी। यदि आप चितवनी की राह पर चलते हैं तो यह ध्यान रखना होगा कि हमारा एक-एक मिनट मूल्यवान है। हमारा मन, चितवनी में लगे, सेवा में लगे, सत्संग में लगे या स्वाध्याय में लगे। किसी न किसी कार्य में आप लगे रहिये। व्यर्थ की निन्दा, चुगली वार्ताओं में आपको कुछ भी उपलब्धि नहीं होने वाली है।

(तप) मन, वाणी एवं कर्म से सत्य का पालन करना ही तप है।

(१) माता-पिता आदि देवों, ब्राह्मण, गुरू और बुद्धिमान पुरूषों का पूजन (सम्मान) करना, पवित्रता, सरलता, ब्रह्मचर्य एवं अहिंसा के पालन आदि गुणों को व्यवहार में लाना शारीरिक तप कहलाता है।

(२) ऐसे वचन बोले जिससे किसी को कष्ट न हो, जो सत्य हो, प्रिय हो तथा हितकारी हो। इसके अतिरिक्त स्वाध्याय का अभ्यास वाणी का तप कहलाता है।

(३) अपने मन को सर्वदा ही प्रसन्न रखना, मधुर भाव रखना, व्यर्थ में न बोलना, प्रत्येक बात में अपने को सम्भाल कर रखना तथा मन में किसी भी प्रकार की बुरी भावना उत्पन्न न होने देना एवं शुद्ध भावना से कार्य करना मानसिक तप कहलाता है।

(४) मनुष्यों के द्वारा ये तीन प्रकार के शारीरिक, मानसिक तथा वाचिक तप किये जाते हैं। परम श्रद्धा से युक्त हो कर फल की कामना का परित्याग कर के

जो तप किया जाता है, उसे सात्विक तप कहते हैं।

तप- इन्दियों को विषयों में न जाने देना, मन को विषयों से रोकना, चित्त में बुरे संस्कारों को पैदा न होने देना और बुद्धि से चिन्तन को उत्कृष्ट रखना तप है।

(५) दूसरों से सत्कार पाने, अपने अभिमान का प्रदर्शन करने दूसरों से अपनी पूजा कराने अर्थात् दम्भपूर्वक दिखावे मात्र के लिये जो तप किया जाता है, वह चंचल तथा क्षण भंगुर होने से राजसिक तप कहा जाता है।

(६) अन्धविश्वास के वशीभूत होकर, स्वयं को पीड़ा देकर (वर्षों तक खड़े रह कर, एक हाथ उठाकर, निराहार रह कर या अपने चारों और आग जलाते हुए चिलचिलाती धूप में बैठ कर) किसी का अनिष्ट करने की भावना से जो तप किया जाता है, वह तामसिक तप कहा जाता है।

तप के द्वारा अशुद्धियों के क्षय होने से शरीर तथा इन्दियों की शुद्धि होती है जिसके परिणाम स्वरूप अणिमा आदि सिद्धियों को प्राप्त करने की योग्याता आ जाती है।

(इश्वर प्रणिधान) आप पांच यमों का पालन कर लीजिये, चार नियमों का पालन कर लीजिये- धारणा, ध्यान, खूब लगाइये लेकिन जब तक आपको समर्पण की भाषा नहीं आती, आपकी समाधि कभी भी लगने वाली नहीं है। आपको कभी भी राज जी का दीदार नहीं होगा। जिसने प्रेम की राह पा ली उसने समर्पण की भाषा सीख ली।

अपने अन्दर किसी भी प्रकार (ज्ञान, वैराग्य, सौन्दर्य, कुल, प्रतिष्ठा आदि) के अहम् को न रखते हुए स्वयं को प्रियतम् परब्रह्म के प्रति समर्पित करना प्रणिधान कहलाता है।

जब तक मैं और मेरा का भाव दिल से हट कर तू और तेरा का स्थान नहीं ले लेता, तब तक कैसा समर्पण, कैसी समाधि और कैसा साक्षात्कार

समाधिसिद्धिः ईश्वर प्रणिधानात्। यो० २/४५

ईश्वर प्रणिधान अर्थात् परमात्मा पर सब कुछ समर्पित कर देना। न मैं सिद्ध हूँ, न देवता हूँ, न महामुनि हूँ, न ब्रह्ममुनि हूँ। इन सारे द्वंदों से ऊपर उठ कर केवल तू है और यह तेरा पसारा है। मैं तो तुम्हारी कीयल। बस एक बात याद रख लीजिये कि मैं केवल आपकी हूँ। न मेरे पास ज्ञान है, न भक्ति है, और न किसी तरह का बल है। यह भावना जब आ जाती है और सब कुछ सौंप दिया जाता है, उस प्रियतम को तो उसे कहते हैं- ईश्वर प्रणिधान। जब तक आप समर्पण की भाषा नहीं समझेंगे एक-दो वर्ष नहीं लाखों वर्षों तक कोई आँखे बन्द करके चितवनी करता रहे तब भी चितवनी लगने वाली नहीं, और न ही समाधि की प्राप्ति होगी।

प्रणाम जी

बबली (नलिनी ढीगरा)

सरसावा

अनुचित इच्छा ही दुःख का कारण

एक दिन एक गरीब व्यक्ति जिसका नाम है मनकुद। राजसभा लगी हुई है। मनकुद सभा में पहुँचकर राजा का अभिवादन करता है। राजा उसका अभिवादन स्वीकारते हुए कहते हैं, बोलिये क्या काम है कहाँ से आये हो आप कौन हो?सारा परिचय देते हुए अपनी इच्छा रखी। मनकुद- सरकार मैं एक गरीब व्यक्ति हूँ, मेरे पास न धन है न घर है न जमीन। मेरे पास कुछ न होने से लाचार हूँ। आप मुझे कुछ देकर कृतार्थ कीजिए।

राजा- क्या चाहिये आपको?तीनों में से एक की व्यवस्था की जाएगी। राजा ज्ञानवान भक्तिवान था। इसलिए मनकुद को समझाया। भाई ये संसार ही दुखरूपी है। यहां सुख- शान्ति ढूँढने पर भी नहीं मिलती। शाश्वत सुख और शान्ति तो ध्यान समाधि में ही है। यदि ऐसा करोगे तो तुम्हें भौतिक व आध्यात्मिक दोनों सुख मिल सकते हैं। यदि ऐसा नहीं करना है तो जो मांगो मैं दे देता हँ।

मनकुद- कुछ सोचकर कहता है, सरकार! मेरे पास ज्ञान और भक्ति दोनों ही हैं। मुझे जमीन ही चाहिये-ज्ञान और भक्ति दोनों ही बेटा और बेटी हैं मनकुद की।

राजा- ठीक है, कल प्रातः सूरज निकलनेसे पहले दरबार पहुँच जाना।

मनकुद- जो हुकुम सरकार बोलकर चला गया। दूसरे दिन सुबह ही वो राजदरबार पहुँच गया और अभिवादन किया। राजा उसे बालकनी में ले गया जहां से चारों ओर दूर दूर तक का नजारा दिखाई देता था।

राजा- अब तुम यहां से दौड़ लगाओ जितना तुम दौड़ लगाकर सीमा बन्द करके सूरज टलने से पहले यहाँ पहुँच जाओगे उतनी जमीन तुम्हारे नाम हो जाएगी।

मनकुद- जो आज्ञा सरकार बोलकर वहां से दौड़ लगायी। जितना आगे जाता उतनी ही अच्छी जमीन उसे दिखाई देती थी। वो सोचता है आज मेरे पास मौका आया है। जितना मैं दौड़कर सीमा लगांऊ उतनी जमीन मेरी हो जाएगी। बेचारा जमीन ज्यादा

बनाने की इच्छा से खाना पीना भी याद नहीं आ रहा। बस भागता ही रहा, भागताही रहा। जितना आगे जाता उतना ही मनोरम दृष्य दिखाई देता। जितना जाता उतने ही हरियाली बाग बगीचे दिखाई देते। सोचता है और थोड़ा जाऊं तो और अच्छी जमीन मिल सकती है। ज्यादा जमीन मेरे पास होने से मैं जमीनदार कहलाऊंगा इसीको थोड़ा बेचकर घर बनाऊंगा धनवान बनूंगा। सोचकर कूद रहा है। आगे हिम से भरे छोटे-छोटे पहाड़ सुन्दर, हरियाली के बीचों- बीच सुगन्धित फूल तथा साफ सुथरी नदी जिसमें जल किलकिलाता हुआ बहा जा रहा है। झरने के मनोरम दृष्य को देखते हुए वो बहुत आगे निकल गया। जब सूरज की तरफ देखा तो पता चला कि दिन तो ढ़ल रहा है। फिर सीमा बनाते हुए वापस लौट रहा है। दरबार में राजा के साथ सभी अधिकारी गण मनकुद की वापसी की बाट देख रहे थे।

मनकुद- मनही मन सोचता है। मैने ये क्या करदिया सारा दिन बिना खाये-पिए ही लालच के कारण भागते भागते इतना दूर चला गया था। अभी दरबार पहुँचने में समय लगेगा। मेरा साथ देने वाला भी कोई नहीं है। अन्त में सारा कुछ छोड़ कर ही जाना पड़ता है।

अब राजमहल दूर से दिखाई देने लगा। खड़े होकर एक बार जोर से सांस ली। धड़कने तेज हो रही थी। हांफ हांफ के सांस ले रहा था। पैर फूलकर खून निकल रहा है। सारा शरीर शिथिल हो रहा हैं सर फटा जा रहा है, चक्कर आ रहा है। फिर भी वो परिवार के दुःख निवारण हेतु भागे जा रहा है। सूरज भी पूरी तरह ढल गया। धीरे धीरे से अन्धेरा छा रहा है। मंजिल तक पहुंचने में २०० कदम बाकी है। अब उसका पैर लड़खड़ाता है और गिर जाता है। राजा रानी के साथ सभी लोग आते हैं। मनकुद को उठाते हुए कहते हैं। उठो मनकुद पानी पिओ...
मुख में पानी छिटक देते हैं पर वो होश में नहीं आ रहा है।

राजा- उठो मनकुद! तुम समय पर न आने पर भी मैं तुम्हें जमीन दे रहा हूँ उठो। बेचारा वो मनकुद फिर दुबारा उठा ही नहीं। हमेशा हमेंशा के लिए सो गया। सबमें सन्नाटा छा गया सबकी आँखों में आँसू थे...

इसी तरह हमारा मन भी काम, क्रोध, लोभ, मोह अहंकार ईर्षा , द्वेष, छल- कपट के वशीभूत हो कर चारों और देखता है फिर उसे पाने की इच्छा से दौड़ लगाता है।

मन की इच्छाएं कभी किसी की पूरी न होती हैं और न हुई हैं। जितना उम्र रूपी सूरज चढ़ता जाता है उतना ही इच्छा रूपी मन भी भागता रहता है। मन के वशीभूत लोग परमात्मा के अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति से कोसों दूर रहते हैं। सोचता है अभी तो समय है भक्ति करने को अब तो घर बनाना, घर कमाना, जमीन जायदाद बटोरना सम्मान, मान-प्रतिष्ठा कमाने में ही जीवन का आधे से ज्यादा हिस्सा चला जाता है। जब शरीर शिथिल व जरजर हो जाता है तब होश आने लगता है कि अब मुझे भक्ति करनी है, सेवा करनी है, दान करना है। फिर कहता है अब सारा राजपाट, परिवार को सौंप के संन्यास लेकर वानप्रस्थ को चला जाऊँगा। राजपाट समेटते समेटते ही उसका शरीर रोग ग्रसित हो जाता है, दिल की बिमारी, अस्थमा, बीपी, शूगर, पीठ में दर्द घुटने में दर्द, शरीर में जलन, आँख से दिखाई नहीं देता कान से ठीक तरह सुनाई नहीं देता। मुँह में दाँत न होने से बंगाल की खाड़ी बन जाती है, ऐसी स्थिति में भक्ति कहां से होगी। सत्य अखण्ड ज्ञान कैसे पढ़ सकता है। वाणी गायन व चर्चा कैसे सुन सकता है। इसी तरह भौतिक, आध्यात्मिक दोनों इच्छाएँ लेकर अपना प्राण त्याग देता है। कबीर जी कहते हैं।

कल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में प्रलय होवहीं, बहुरी करोगे कब।।

इसलिए शरीर स्वस्थ रहते ही सच्चे सतगुरू की खोज करनी चाहिये फिर सतगुरू के माध्यम से सचिदानन्द परब्रह्म का अखण्ड ज्ञान धाम, लीला, स्वरूप, सिंगार, शोभा आत्मा के दिल में अंकित हो जाती है। अब भौतिक इच्छा छोड़कर सच्चे ज्ञान से परमात्मा प्राप्ति की इच्छा में लगाकर आत्मा जाग्रत करनी चाहिये।

प्रणाम जी

कुमार जी-
सिक्किम

शोक समाचार

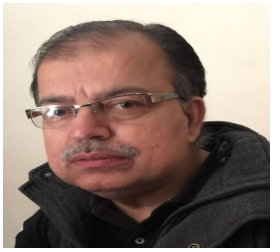

अत्यन्त दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा के ट्रस्टी व तारतम मंजरी पत्रिका के सम्पादक तथा लेखक, अबोहर निवासी श्री अमर लाल सेठी जी के सुपुत्र डा० शैलेन्द्र सेठी (५५वर्ष) का २४जुलाई २०१८ को धाम गमन हो गया है। श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा परिवार की तरफ से पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री राजजी के चरणों में प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान कर अपने श्री चरणों में स्थान देवें तथा उनके परिवार के सभी सदस्यों को इस असामयिक दुःख को सहन करने की शक्ति दें।

प्रणाम जी

शोक समाचार

अत्यन्त दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि कानपुर निवासी श्री मुखराजगिरधर, जो कि श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा के अग्रणी सुन्दरसाथ हैं। वे ज्ञानपीठ के हर कार्यक्रम, विशेष कर वार्षिकोत्सव में सुचारू रूप से मंच संचालन करते हैं, उनकी धर्मपरायणा धर्मपत्नि श्री मति पुष्पा गिरधर का दिनांक ८ अगस्त २०१८ को धामगमन हो गया है। श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा परिवार की तरफ से पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री राजजी के चरणों में प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान कर अपने श्री चरणों में स्थान देवें तथा उनके परिवार के सभी सदस्यों को इस असामयिक दुःख को सहन करने की शक्ति दें।

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ के धर्म प्रचारक, आचार्य एवं विद्यार्थीगण ने वर्ष २०१८ में निम्नलिखित स्थानों पर जाकर श्री बीतक साहिब की चर्चा की है जो कि इस प्रकार से है-

बीतक चर्चाकार	स्थान
पुज्य राजन स्वामी जी-	श्री प्राणनाथ ज्ञान पीठ सरसावा
वाणी गायन-श्रवण जी, रन्जीत जी, नरेन्द्र जी,	श्री प्राणनाथ ज्ञान पीठ सरसावा
आचार्य चन्द्र जी-	नेपाल, असम
धर्म प्रचारक अमृत भाई जी, हर्षद भाई जी-	अंगुल (उड़ीसा)
धर्म प्रचारक श्री चंचल जी-	पथरिया (मध्य प्रदेश)
किरन माता जी, बबली माता जी, ओमनाथ जी	सिक्किम, गंगटोक मोंगमाया, दार्जिलिंग
सूर्य प्रताप जी-	बड़ोदरा (गुजरात)
अर्जुन जी-	दाहोद (गुजरात)
अशोक जी-बाल कृष्ण जी	माडल टाउन, देहली
वाणी गायन- रन्जीत जी, नरेन्द्र जी-	माडल टाउन, देहली
आचार्य सुभाष जी, राज कुमार जी	काकोरी (लखनऊ)
आ० सुभाष जी-	कंचनपुर मटियारी, नवाखेड़ा (लखनऊ)
तेजसिंह जी-	दाहोद (गुजरात)
अभिषेक जी	पथरिया (मध्य प्रदेश)
नरेश शर्मा जी	दामोह (मध्य प्रदेश)
कुमार जी	गोवटी, तुलसी रामपुरा, (राजस्थान)
महिमा जी	कुंडली (उ०प्र०)
नीरज जी, सत्यम जी	दाहोद (गुजरात)
यदुनन्दन जी	यू. एस. ए.
घनश्याम जी	गोरखा (नेपाल)
शोभा, लक्ष्मी	रामनगर (नेपाल)

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र. 247232
MICR-Code" 247016005
IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
१३३५०००१००१११९१६
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
१३३५०००१००११८७५१
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
३४९७११८८७६७
भारतीय स्टैट बैंक
(११४३९) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- २४७२३२
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	किरंतन टीका हिन्दी	300.00
	किरंतन टीका नेपाली	300.00
	किरंतन टीका अंग्रेजी	350.00
2.	खिलवत टीका	150.00
3.	सागर टीका	170.00
4.	श्रृंगार टीका	300.00
5.	सिन्धी टीका	150.00
6.	परिक्रमा टीका	275.00
7.	परिक्रमा टीका (अंग्रजी)	350.00
	कलश हि. गुजराती	225.00
	रास टीका	150.00
	बीतक टीका	400.00
8.	विद्वत्दमनी	200.00
9.	धाम सुषमा	60.00
10.	पटदर्शन	200.00
11.	दोपहर का सूरज (हिन्दी)	60.00
12.	दोपहर का सूरज (अंग्रेजी)	80.00
13.	प्रेम का चाँद	65.00
14.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00
15.	बोध मंजरी (अंग्रेजी)	15.00
16.	बोध मंजरी (नेपाली)	30.00
17.	ज्ञान मंजूषा	20.00
18.	हमारी रहनी	50.00
19.	अमृत बिन्दु	10.00
20.	सत्यांजलि	40.00
21.	बाल युवा संस्कार	10.00
22.	संस्कार पद्धति	15.00
23.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
24.	चितवनी	05.00
25.	चितवनी नक्शा	30.00
26.	नित्य पाठ (चौपाई)	15.00
27.	नित्य पाठ (बीतक)	05.00
28.	मेहर सागर	10.00
29.	श्रृंगार के मोती	15.00
30.	सागर के मोती	10.00

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
31.	अनमोल मोती	05.00
32.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
33.	अनमोल मोती तफसीरे हुसैनी	50.00
34.	जामिल–ए–मारिफल	30.00
35.	फरमान	30.00
36.	बुलंद मुकदमा बड़ा मसौदा	40.00
37.	शब–ए–मेअराज	15.00
38.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
39.	Supreme Truth God	20.00
40.	झूठ ही झूठ	60.00
41.	जागो और जगाओ	100.00
42.	निजानन्द योग	60.00
43.	ब्रह्मवाणी चर्चा	40.00
44.	सेवा पूजा	30.00
45.	मुख्तार–ए–हिंद	20.00
46.	Nijanand School	120.00
47.	श्री मुखवाणी संगीत (राग सहित)	150.00
48.	प्रश्नमाला	05.00
49.	प्राणनाथ महिमा (हिन्दी)	20.00
50.	प्राणनाथ महिमा (गुजराती)	20.00
51.	बोध मंजरी (गुजराती)	15.00
52.	सिनगार (गुजराती)	300.00
53.	सागर (गुजराती)	170.00
54.	चितवनी (गुजराती)	05.00
55.	ध्यान की पुष्पाञ्जली	70.00
56.	हमारी शाश्वत सम्पदा	60.00
57.	तारतम पीयूषम	70.00
58.	बोध मंजरी (उड़ीया)	15.00
59.	श्री मुखवाणी संगीत	60.00
60.	तमस के पार (बड़ी)	40.00
	तमस के पार (छोटी)	20.00
61.	तीसरा क्यामतनामा	90.00
62.	ब्रह्मांड रहस्य	40.00
63.	तारतम के नीर्झर	70.00
64.	मूल स्वरूप की ओर	80.00

ताला द्वार न कुंजी खोलना, समझाए दई सबों आप।
दिल अपने में हक बसें, ज्यों जाने त्यों कर मिलाप।।१।।

श्री महामति जी की आत्मा कहती हैं कि हे धाम धनी! आपने तारतम वाणी के प्रकाश में सब कुछ समझा ही दिया है और अब तो मेरे धाम हृदय में साक्षात् आकर विराजमान हो गये हैं। ऐसी स्थिति में न तो मुझे किसी ताले या कुंजी के बारे में सोचना है और न दरवाजा खोलने के विषय में। अब आप, जिस तरह से भी चाहे, उस तरह से मिलिए।

सेहेरग से नजीक, आड़ा पट न द्वार।
खोली आंखें समझ कीं, देखती न देखे भरतार।।२।।

हे प्रियतम! आप मेरे धाम हृदय में मेरी प्राणनली (षेहरग) से भी अधिक निकट हैं, इसलिये अब मेरे और आपके बीच में किसी भी प्रकार का पर्दा नहीं है। ऐसी स्थिति में तो अब मुझे इष्क का द्वार भी ढूंढने की आवष्यकता नहीं रह गयी है। आपने मेरी ज्ञान दृष्टि को तो खोल दिया है, किन्तु इष्क नहीं होने से मैं आपको देखते हुए भी नहीं देख पा रही हूँ।

BOOK POST

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2016-18

प्रकाशक
पू.श्री राजन स्वामी जी

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232

सम्पादक
श्री एस. पी. आर्य
भूतपूर्व आई. ए. एस.

तारतम मंजरी पत्रिका के स्वामी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा
जिला–सहारनपूर, दूरभाष–8650851010
अवतरित न होने पर कृपया इस पते पर लौटाये।
धन्यवाद

सेवा में,